(तमिलनाडु) तथा सिरी (पश्चिम बंगाल और सिज़्किम) में पाए जाते हैं। विश्व में गायों की संज़्या 13 खरब (1.3 बिलियन) होने का अनुमान है। भारत इसमें पहले स्थान पर है। यहां 281,700,000 गाय हैं। दूसरे स्थान पर ब्राजील और तीसरे स्थान पर चीन है। सांस्कृतिक और सामाजिक ताने-बाने में कृषि प्रधानता और पशुधन की परिकल्पना प्राचीन समय से ही रही है। किसी भी समाज में खाद्य-सुरक्षा के लिए कृषि उत्पाद और पशुधन उत्पाद की उपलज़्धता आवश्यक मानी जाती थी। ग्रामीण भारत में कृषि के साथ पशुपालन की परंपरा भी समानांतर तरीके से चलती रही है। पशुपालन किसानों की नियमित आय का साधन रहा है। इसमें पशुपालन का काम सबसे ज्यादा कम जोत एवं भूमिहीन वर्ग के लिए सबसे ज्यादा लाभदायक रहा है। भारत कृषि प्रधान देश है। यहां अभी भी 80 प्रतिशत से अधिक आबादी गांवों में बसती है। ग्रामीण भारत में बसने वाली आबादी का मुज़्य पेशा खेती ही रहा है। यह खेती पशुधन पर आधारित रही है। समय बदलता गया और पशु की जगह मशीनों का उपयोग खेती में होने लगा। मशीन का उपयोग होना गलत नहीं है। लेकिन पशुपालन से मुंह मोड़ने के कारण देश में पशुओं की आवश्यकता को कम कर दिया गया है और इससे आबादी खतरे में पड़ गई है। पशुपालन के लिए सरकारीस्तर पर बहुत प्रयास हो रहे हैं। इसके लिए केन्द्र और राज्य सरकारों की तरफ से पूरा एक विभाग बना दिया गया है। ये विभाग पशुपालन की दिशा में काम भी कर रहे हैं, परन्तु समाज के लिए पशुपालन ज़्यों जरूरी है, यह बताने में विभाग अभी तक सार्थक सफलता सामने नहीं ला पाए हैं। सरकारी महकमें का काम करने का अपना तरीका है। समाज के किस वर्ग के बीच जाकर यह काम करना उपयोगी होगा, इस धारणा से विभाग काम नहीं करता। सरकारी विभाग ज़्वालिटी की वजाय ज़्वांटिटी के हिसाब के कार्य करता है। इसलिए गांव में रहने वाली बहुसंज़्यक नई आबादी भी पशुधन के महत्व से अनजान है। पशु को धन की संज्ञा इसलिए दी गई थी कि उसे समाज में बराबरी का दर्जा प्राप्त था। वह परिवार का अभिन्न हिस्सा माना जाता था। उसके रहने, खाने-पीने की उसी तरह चिंता होती थी जैसे परिवार के अन्य सदस्यों की की जाती थी। गाय को माता और बैल का दर्जा मुखिया का होता था। कारण, गाय जहां परिवार के सदस्यों के लिए दूध, घी, मज़्खन, दही जैसे पौष्टिक आहार का दाता थी, वहीं बैल के गाड़ी और हल में चलने से होने वाली आय से परिवार का खर्च चला करता था। सिर्फ गाय-बैल ही नहीं, बल्कि कम जोत वाले किसानों तथा भूमिहीनों के लिए भेंड़, बकरी, ऊंट जैसे पशु पालनहार माने जाते थे। भारत में पशुपालकों की संज़्या में लगातार गिरावट आ रही है। हालांकि सरकारी पशु गणना के हिसाब से पशुओं की तादात में वृद्धि आई है, लेकिन एक तरह से देखा जाय तो पशु पालन का कार्य लगातार सिमटता जा रहा है। पशुपालन बड़े कारोबार में परिवर्तित होना देश की उन्नति के लिए अच्छा है, लेकिन पशुपालन का सामाजिक दृष्टि से जो महत्व रहा है, वह कम हुआ है। इसके कई कारण है। गांवों में गौचर की जगह खत्म हो रही है या खत्म हो गई है। पशु आहार का संकट भी बढ़ा है। देश में अधिकांश आज भी ऐसे गांव हैं जहां के लोग समय के साथ उन्नति नहीं कर पाए हैं। उनके सामने रोजगार का बड़ा संकट है। वह चाहकर भी पशु पालन नहीं कर सकते, ज़्योंकि सबसे बड़ी समस्या पशु आहार की है। दुनिया में भारत ऐसा देश है जहां दुधारू पशु सबसे ज्यादा पाए जाते थे। इन पशुओं से दूध का आमद कम थी, लेकिन पौष्टिकता इतनी होती थी कि उस दूध का सेवन करने वाले के पास बीमारी फटकने से डरती थी। इसमें पशु की बनावट अथवा नस्ल का महत्व नहीं था, बल्कि इसका संबंध उस खान-पान से था जो पशु को मिला करता था। विचरण करता पशु गांव के आसपास लगे पेड़ों की पत्तियां, चारा का जो सेवन करता था, उसमें आहार के साथ बहुत सारी वनस्पति और औषधि पशु के शरीर में जाती थी और उससे दूध का जो निर्माण होता था, वह मनुष्य को शज़्तिशाली बनाता था। पशु का प्रयोग खेती में बिलकुल बंद होता जा रहा है। कुछ स्थानों पर बैल से खेती की जाती है, लेकिन वहां बैल से जोत करना किसान की मजबूरी है। ज़्योंकि पहाड़ी और तलहटी क्षेत्र में खेत जोतने के लिए ट्रैज़्टर ले जाना संभव नहीं है। इसलिए कुछ स्थानों पर बैल की उपयोगिता रह गई है। देशी नस्ल की गाय पालन का चलन बहुत सीमित हो गया है। इससे नस्ल खत्म होने का खतरा भी मंडरा रहा है। केन्द्र सरकार द्वारा कराए गए 19वीं पशुगणना 2012 पर नजर डालें तो पशुओं की कुल आबादी 3.33 फीसदी घट गई है। हालांकि कुछ राज्यों जैसे गुजरात (15.36 फीसदी), उत्तर प्रदेश (14.01 फीसदी), असम (10.77